Purva Mimaansa
A Multi-discipinary Bi-annual Research Journal
(Double Blind Peer Reviewed)

Vol. 8 No. 1-2, March-Sep. 2017
ISSN : 0976-0237

नीतिशास्त्र में कर-प्रबन्धन

डा० विशाल भारद्वाज

संस्कृत साहित्य में नीति ग्रन्थों का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है। 'नीति' शब्द संस्कृत भाषा की 'नी' धातु से 'क्तिन्' प्रत्यय लगाने से बना है, जिसका अर्थ है— 'ले जाना'। जो वृत्ति मनुष्य को असत्य से सत्य की ओर, कुमार्ग से सन्मार्ग की ओर, अज्ञान से ज्ञान की ओर तथा मृत्यु से जीवन की ओर ले जाती है, वह नीति कहलाती है। नीति को भली-भान्ति समझने वाले, श्रद्धालु एवं नम्र स्वभाव की प्रकृति वाले ही इस जगत् में पूजनीय बनते हैं क्योंकि नीतिशास्त्र शीघ्र फल देने वाला होता है। नीति आपत्ति को तथा अनीति अति समृद्ध सम्पत्ति को भी नष्ट कर देती है। नीति के बिगड़ने से सारा संसार बेवश होकर नष्ट हो जाता है।

संस्कृत साहित्य में नीतिग्रन्थों का उद्भव देवगुरु बृहस्पति एवं दैत्यगुरु शुक्राचार्य से माना जाता है। इन दोनों ने देवताओं एवं दैत्यों को नैतिक मार्ग प्रदर्शन हेतु क्रमशः बृहस्पतिनीति एवं शुक्रनीति नामक गौरवपूर्ण नीतिग्रन्थों का सृजन किया। इन दोनों नीतिशास्त्रों ने लौकिक संस्कृत साहित्य के परवर्ती नीतिग्रन्थों को अनुप्राणित किया है। ऐसे ग्रन्थों की भी एक बड़ी संख्या है, यथा - विदुरनीति, चाणक्यनीति, चाणक्यसूत्र, अर्थशास्त्र, कामन्दकीयनीति, पञ्चतन्त्र, हितोपदेश, नीतिशतक आदि।

पुरुषार्थचतुष्ट्य (धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष) की प्राप्ति मानवीय जीवन का प्रधान लक्ष्य है। आचार्य चाणक्य का कथन है कि धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष में से जो व्यक्ति एक को भी प्राप्त नहीं कर पाता, उसका जीवन बकरी के गलस्तन के समान निरर्थक सिद्ध होता है। नीतिशास्त्र को पुरुषार्थ चतुष्ट्य का साधक स्वीकार किया गया है। नीतिशास्त्रकार महर्षि शुक्राचार्य का कहना है कि नीतिशास्त्र से भिन्न अन्य सभी शास्त्रों में व्यावहारिक जगत् के किसी एक अंश को ही वर्णित किया जाता है, किन्तु सार्वजनिक हित एवं सामाजिक सुरक्षा का निर्देशन नीतिशास्त्र ही प्रदान करता है, क्योंकि धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूप पुरुषार्थचतुष्ट्य का यह साधक है।

ज्ञानी जन की प्रत्येक क्रिया लोक व्यवहार से प्रभावित होती है तथा यह लोकव्यवहार ही उनका उपदेष्टा होता है। भोजन के बिना प्राणियों की देह का अस्तित्व जिस प्रकार नहीं रह सकता, ठीक उसी प्रकार लोकव्यवहार का अस्तित्व नीतिशास्त्र के ज्ञान के बिना टिक नहीं सकता। नीतिशास्त्र सभी मनुष्यों को सारी मनोवाञ्छित वस्तुएं प्रदान करने वाला माना गया है। इसे सभी मानते हैं तथा यह राजा की जानकारी के लिए भी अत्यावश्यक है, क्योंकि राजा तो जन-सामान्य का स्वामी है। नीतिविहीन स्वेच्छाचारी राजा पग-पग पर दुःख झेलता है।

कोश अर्थात् खजाने की गणना भी राज्य के सात अंगों में करते हुए इसे राज्य का मुख स्वीकार किया गया है। कोशयुक्त राजा का वास्तविक प्राण उसका जीवन नहीं, अपितु उसका कोश ही माना जाता है।

शत्रु का अभाव, सेना तथा कोश - ये तीनों राष्ट्र की वृद्धि में सहायक माने गए हैं। अतः सब कुछ कोशाश्रित होने के कारण राजा को चाहिए कि वह सर्वप्रथम कोश पर ध्यान दे, क्योंकि यह कोश रूपी धन ही राजाओं की प्रभुता की जड़ है। इसके बिना तो राजत्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

नीतिशास्त्र में राजा के द्वारा कोश-वृद्धि के लिए अनेक साधनों का प्रयोग-वर्णन उपलब्ध है। आचार्य कौटिल्य के मतानुसार राष्ट्र की सम्पति को बढ़ाना, राष्ट्र के चरित्र पर ध्यान रखना, चोरों पर निगरानी रखना, राजकीय अधिकारियों को रिश्वत लेने से रोकना, सभी प्रकार के अन्नोत्पादन को प्रोत्साहित करना, जल-स्थल

संस्कृत विभाग, हिन्दू कालेज, अमृतसर।

Vol. 8 No. 1-2, March-Sep. 2017
ISSN : 0976-0237

में उत्पन्न होने वाली प्रत्येक व्यापार योग्य वस्तुओं को बढ़ाना, अग्नि आदि के भय से राज्य की रक्षा करना, ठीक समय पर यथोचित कर वसूल करना व हिरण्यादि की भेंट करना - ये कोशवृद्धि के उपाय है।

इनमें कर (Tax) ग्रहण करना कोशवृद्धि का प्रमुख उपाय माना जाता है। कर ग्रहण करने की पृष्ठभूमि में नीतिशास्त्र की ऐसी मान्यता है कि राजा अपनी प्रजा की रक्षा करने के लिए ही उससे कर ग्रहण करता है एवं प्रजा कर प्रदान करके राजा को संवर्द्धित करती है। नीतिशास्त्र की दृष्टि में वही राजा सुपात्र है जो न्यायपूर्वक धनोपार्जन करता है एवं उपार्जित धन का व्यय सत्कर्म में करता है। इसके विपरीत अन्यायपूर्वक धनोपार्जन करने वाला एवं कुमार्ग में खर्च करने वाला कुपात्र कहलाता है।

कर-ग्रहण की विधि के सम्बन्ध में नीतिशास्त्र का कहना है कि जिस प्रकार माली बाग में से एक-एक फूल को चुनता है, उसे समूल नष्ट नहीं करता, उसी प्रकार राजा भी कर ग्रहण करते समय माली का अनुकरण करे, न कि कोयला बनाने वाले की तरह प्रजा का मूलोच्छेद ही कर दे। नीतिशास्त्र में राजा को निर्देश दिया गया है कि वह प्रजा को कष्ट पहुंचाए बिना उनसे उसी प्रकार कर ग्रहण करे, जिस प्रकार भंवरा फूल को हानि पहुंचाए बिना उसका रसपान करता है। राजा रूपी गोपालक को अपनी प्रजा रूपी गाय का सम्यक् पालन-पोषण करते हुए धीरे-धीरे उससे धन रूपी दूध ग्रहण करना चाहिए तथा उससे न्यायपूर्वक व्यवहार करते हुए समय आने पर ही प्रजा से 'कर' आदि ग्रहण करना चाहिए, जैसे लता को सींचते करने पर समयानुसार ही उससे फूल चुने जाते हैं।

नीतिशास्त्रानुसार जो राजा मोहवश अपनी प्रजा को बकरी के समान काट डालता है अर्थात् उन पर करों का अत्यधिक बोझ डाल देता है, उसे एक ही बार तृप्ति मिलती है, दूसरी बार नहीं।

राजा की कर-ग्रहण प्रक्रिया तो ऐसी होनी चाहिए कि प्रजा को इसका आभास भी न हो पाए। जिस प्रकार दीपक अपनी स्वच्छ बातियों के कारण तेल को खींचने पर भी किसी की दृष्टि में नहीं आता, वैसे ही राजा भी अन्तःकरण के श्रेष्ठ गुणों के कारण प्रजा से धन लेता हुआ भी किसी की दृष्टि में नहीं आता। इसके लिए राजा को चाहिए कि वह बछड़े के समान प्रजा का पालन करे, तभी यह पृथ्वी एवं प्रजा रूपी गाय उस राजा के लिए कल्पलता के समान अनेक फलों को प्रदान करती रहेगी।

नीतिशास्त्रानुसार खरीद-बिक्री करने वाले से राजा जो अपना कर वसूल करता हैं, उसे 'शुल्क' कहते हैं तथा बाजार की राह में जहां इसे वसूला जाता है, उसे 'करसीमा' अथवा 'चुंगीघर' कहते हैं। राजा इस बात के प्रति अत्यन्त सचेत रहे कि किसी भी वस्तु पर एक ही बार कर लगाया जाए, दो बार नहीं। किसानों से उतना ही कर ग्रहण किया जाए जितने से वे क्षतिग्रस्त न हों। खर्च काटकर खान से निकलने वाले सोने का आधा भाग, चांदी का एक तिहाई, तांबे का एक चौथाई, लोहे, रांगे व सीसे का छठा भाग, रत्नों एवं क्षारीय द्रव्यों का आधा भाग तथा किसानों के लाभ की अधिकता को देखते हुए तदनुसार उनका तीसरा, पांचवां, सातवां अथवा दसवां भाग राजस्व के रूप में ग्रहण करना चाहिए। घसियारे एवं लकड़हारों की आय का बीसवां भाग, भेड़, बकरी, गाय, भैंस तथा घोड़ों की वृद्धि पर उनका आठवां भाग तथा भैंस, बकरी और गाय के दूध में से राजा

सोलहवां भाग कर के रूप में ग्रहण करे। व्यापारियों एवं सूदखोरों से लाभांश का बत्तीसवां भाग कर के रूप में राजा को लेना चाहिए। दुकानदारों से दुकान की भूमि सहित कर लिया जाए तथा पथ की सफाई एवं संरक्षण के लिए यात्रियों से भी कर वसूल किया जाए। साथ ही राजा को सतर्क किया गया है कि वह इस धन का दुरुपयोग न करते हुए एक दास की भान्ति इस धन की रक्षा करे।

आचार्य चाणक्य ने शुल्कव्यवहार (कर-वसूली) के तीन प्रकारों का उल्लेख किया है— (1) बाह्य

Vol. 8 No. 1-2, March-Sep. 2017
ISSN : 0976-0237

अर्थात् अपने राज्य में उत्पन्न वस्तुओं की चुंगी, (2) आभ्यन्तर अर्थात् राजधानी में उत्पन्न होने वाली वस्तुओं पर चुंगी तथा (3) आतिथ्य अर्थात् विदेश से आने वाले सामान पर कर। बाहर जाने वाले माल पर लगाए जाने वाले कर को 'निष्क्राम्य' तथा बाहर से आने वाले माल पर लगाई चुंगी को 'प्रवेश्य' की संज्ञा दी गई है।

आयात होने वाली वस्तुओं पर सामान्यतः उनकी लागत का पांचवां भाग चुंगी ली जानी चाहिए, जबकि फूल, फल, साग, गाजर, मूल, शकरकन्द, धान्य, सूखी मछली तथा मांस पर इनकी लागत का छठा भाग कर निर्धारित किया जाना चाहिए। शंख, हीरा, मणि, मुक्ता, प्रबाल तथा हार जैसी मूल्यवान् वस्तुओं पर कर-निर्धारण उनके विशेषज्ञों, पारखियों अथवा विशिष्ट रूप से नियत समय के लिए नियत वेतन पर नियुक्त व्यक्तियों द्वारा निर्धारित किया जाना चाहिए।

अतः राजा को चाहिए कि वह देश, जाति तथा आचार के अनुसार नए एवं पुराने प्रत्येक पदार्थ पर कर की व्यवस्था करे तथा उनमें जहां से नुकसान की सम्भावना हो, उसके लिए उचित दण्ड की व्यवस्था भी करे।

किस-किस को कर से छूट दी जानी चाहिए, इस सन्दर्भ में नीतिशास्त्र का कहना है कि राजा श्रोत्रिय अर्थात् धार्मिक व्यक्ति से कर ग्रहण न करे। इसके अतिरिक्त नए तालाब तथा सीमाबन्ध बनवाने वाले व्यक्ति पर पांच वर्ष तक सरकारी टैक्स न लगाया जाए। यदि वह जीर्णोद्धार कराये तो चार वर्ष तक, यदि उनको बढ़ाये तो तीन वर्ष तक सरकारी टैक्स न लिया जाए। इसी प्रकार भूमि को गिरवी रखने तथा बेचने पर दो वर्ष के लिए टैक्स से छूट दी जाए। अपने पारिवारिक उपभोग के लिए संचित गाय, भैंस आदि के दूध पर राजा कर न लगाए तथा न ही निजी उपभोग के लिए खरीदे गए अन्न-वस्त्र पर कर लगाए।

संक्षेप में कहा गया है कि राजा दुष्ट लोगों का धन उसी प्रकार ले ले, जिस प्रकार वाटिका से पके हुए फल को लिया जाता है, किन्तु धर्मात्मा पुरुषों का धन कच्चे फल की तरह त्याग दे। कच्चे फल के समान धर्मात्मा पुरुषों से वसूला धन प्रजा के कोप का कारण बन जाता है। नए कर लगाने से भी राजा को परहेज करना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने पर प्रजा उद्विग्न हो जाती है।

1 (प) संस्कृत हिन्दी कोश, पृ० सं० - 550.
(पप)...र्नयनान्नीतिरुच्यते।। शुक्रनीति, 1/157.

2 ...नीतिज्ञाः शीलसम्पन्ना भवन्ति कुलपूजिताः।। चाणक्यनीति, 2/10.

3 ...नूनं सद्यः फलानि नीतिशास्त्राणि...।
पञ्चतन्त्र, काकोलूकीयम्, पृ० सं० - 387.

4 ...प्रियोपपत्तिः शुचमापदं नयः श्रियः समृद्धा अपि हन्ति दुर्नयः।।
हितोपदेश, 3/118.

5 ..बुधैस्त्यक्ते राज्ये न हि भवति नीतिर्गुणवती
विपन्नायां नीतौ सकलमवशं सीदति जगत्।। वही, 2/77.

6 धर्मार्थकाममोक्षाणां यस्यैकोऽपि न विद्यते।
अजागलस्तनस्यैव तस्य जन्म निरर्थकम्।। वही, 13/9, हितोपदेश, प्रस्ताविका, 26.

7 ...क्रियैकदेशबोधीनि शास्त्राण्यन्यानि सन्ति हि।।
सर्वोपजीवकं लोकस्थितिकृन्नीतिशास्त्रकम्।।

Vol. 8 No. 1-2, March-Sep. 2017
ISSN : 0976-0237

धर्मार्थकाममूलं हि स्मृतं मोक्षप्रदं यतः।। शुक्रनीति, 1/4-5.

8 आचार्यः सर्वचेष्टासु लोक एव हि धीमतः।..वही, 3/32.

9 सर्वलोकव्यवहारस्थितिर्नीत्या विना नहि।
यथाऽशनैर्विना देहस्थितिर्न स्याद्धि देहिनाम्।। वही, 1/11.

10 सर्वाभीष्टकरं नीतिशास्त्रं स्यात्सर्वसम्मतम्।
अत्यावश्यं नृपस्यापि स सर्वेषां प्रभुर्यतः।। वही, 1/12.

11 नीतिं त्यक्त्वा वर्त्तते यः स्वतन्त्रः स हि दुःखभाक्। वही, 1/16.

12 ...मुखं कोशो.....।। शुक्रनीति, 1/62.

13 ...कोशः कोशक्तः प्राणाः प्राणाः प्राणा न भूपतेः।। हितोपदेश, 2/92.

14 ...अर्थ्यभावो बलं कोशो राष्ट्रवृद्ध्यै त्रयं त्विदम्।। शुक्रनीति, 4/2/16.

15 ...कोषपूर्वाः सर्वारम्भाः। तस्मात् पूर्वं कोषमवेक्षेत। अर्थशास्त्र, 2/24/8, पृ० सं० - 109.

16 ...प्रभुत्वं धनमूलं हि राज्ञामप्युपजायते।। हितोपदेश, 1/123.

17 यत्र राजा तत्र कोशो विना कोशान्न राजता।...वही, 3/77.
प्रचारसमृद्धिश्चरित्रानुग्रहश्चोरग्रहो युक्तप्रतिषेधः सस्यसम्पत्
पण्यबाहुल्यमुपसर्गप्रमोक्षः परिहारक्षयो हिरण्योपायनमिति कोषवृद्धिः।
अर्थशास्त्र, 2/24/8, पृ० सं० - 109.

18 (प) प्रजां संरक्षति नृपः सा वर्धयति पार्थिवम्।...हितोपदेश, 3/3.
(पप) वृक्षान् सम्पुष्य यत्नेन फलं पुष्पं विचिन्वति।
मालाकार इवात्यन्तं भागहारस्तथाविधः।। शुक्रनीति, 2/172.

19 स्वागमी सद्व्ययी पात्रं...।।...शुक्रनीति, 4/2/6.

20 ...अपात्रं विपरीतकम्।...वही, 4/2/6.

21 (प) पुष्पं पुष्पं विचिन्वीत मूलच्छेदं न कारयेत्।
मालाकार इवारामे न यथांगारकारकः।। विदुरनीति, 2/18.
(पप) ...मालाकार इव ग्राह्यो भागो नाङ्गारकारवत्।। शुक्रनीति, 4/2/113.

22 यथा मधु समादत्ते रक्षन् पुष्पाणि षट्पदः।
तद्वदर्थान्मनुष्येभ्य आदद्यादविहिंसया।। वही, 2/17.

23 (प) गोपालेन प्रजाधेनोर्वित्तदुग्धं शनैः शनैः।
पालनात्पोषणाद्राह्यं न्याय्यां वृत्तिं समाचरेत्।।
(पप) यथा गौर्दुह्यते काले पाल्यते च तथा प्रजाः।
सिच्यते चीयते चैव लता पुष्पफलप्रदा।। पंचतन्त्र, 1/241, 245.

Vol. 8 No. 1-2, March-Sep. 2017
ISSN : 0976-0237

24 अजामिव प्रजां मोहाद्यो हन्यात्पृथिवीपतिः।
तस्यैका जायते तृप्तिर्न द्वितीया कथञ्चन।। पंचतन्त्र, 1/242.
नृपदीपो धन-स्नेहं प्रजाभ्यः संहरन्नपि।
आन्तरस्थैर्गुणैः शुभ्रैर्लक्ष्यते नैव केनचित्।। पंचतन्त्र, 1/244.
राजन्! दुधुक्षसि यदि क्षितिधेनुमेनां तेनाद्यवत्समिव लोकममुं पुषाण।
तस्मिंश्च सम्यगनिशं परिपोष्यमाणे नानाफलं फलति कल्पलतेव भूमिः।।
नीतिशतक, श्लोक सं० - 47.

25 विक्रेतृक्रेतृतो राजभागः शुल्कमुदाहृतम्।
शुल्कदेशा हट्टमार्गाः करसीमाः प्रकीर्त्तिताः।। शुक्रनीति, 4/2/108.
(प) वस्तुजातस्यैकवारं शुल्कं ग्राह्यं प्रयत्नतः।
क्वच्चिन्नैवासकृच्छुल्कं राष्ट्रे ग्राह्यं नृपैश्छलात्।। वही, 4/2/109.
(पप) सकृदेव न द्वि प्रयोज्यः।...अर्थशास्त्र, 5/90/2, पृ० सं० - 415.

26 हरेच्च कर्षकाद्भागं यथा नष्टो भवेन्न भवेन्न सः।...शुक्रनीति, 4/2/113.
स्वर्णादर्द्धं च रजतात् तृतीयांशञ्च ताम्रतः।
चतुर्थांशन्तु षष्ठांशं लोहाद् वंगाच्च सीसकात्।।
रत्नार्द्धं चैव क्षारार्द्धं खनिजाद् व्ययशेषतः।
लाभाधिक्यं कर्षकादेर्यथा दृष्ट्वा हरेत् फलम्।

27 त्रिधा वा पञ्चधा कृत्वा सप्तधा दशधापि वा।। वही, 4/2/118-119.
तृणकाष्ठादिहरकाद् विंशत्यंशं हरेत् फलम्।
अजाविगोमहिष्याश्ववृद्धितोऽष्टांशमाहरेत्।

28 महिष्यजाविगोदुग्धात् षोडशांशं हरेन्नृपः।।...वही, 4/2/120.

29 वाद्धुंषिकाच्च कौसीदाद् द्वात्रिंशांशं हरेन्नृप।...वही, 4/2/128.
यथा चापणिकेभ्यस्तु पण्यभूशुल्कमाहरेत्।

30 मार्गसंस्काररक्षार्थं मार्गगेभ्यो हरेत् फलम्।।...वही, 4/2/129.

31 सर्वतः फलभुग्भूत्वा दासवत् स्यात्तु रक्षणे।...वही, 4/2/130.
शुल्कव्यवहारो बाह्यमाभ्यन्तरं चातिथ्यम्, निष्क्राम्यं, प्रवेश्यं च शुल्कम्।
अर्थशास्त्र, 2/38/22, पृ० सं० - 189.

32 प्रवेश्यानां मूल्यपञ्चभागः। वही, 2/38/22, पृ० सं० - 189.
पुष्पफलशाकमूलकन्दवल्लिक्यबीजशुष्कमत्स्यमांसानां षड्भागं गृह्णीयात्।
वही, 2/38/22, पृ० सं० - 189.

33 शश्वज्रमणिमुक्ताप्रवालहाराणां तज्जातपुरुषैः कारयेत्,
कृतकर्मप्रमाणकालवेतनफलनिष्पत्तिभिः। वही, 2/38/22, पृ० सं० - 189.
अतो नवपुराणानां देशजातिचरित्रतः।

34 पण्यानां स्थापयेच्छुल्कमत्ययं चापकारतः।। वही, 2/38/22, पृ० सं० - 191.
अरण्यजातं श्रोत्रियस्वं च परिहरेत्।...अर्थशास्त्र, 5/90/2, पृ० सं० - 412.

35 तटाकसेतुबन्धानां नवप्रवर्तने पाञ्चवर्षिकः परिहारः। भग्नोत्सृष्टानां चातुर्वर्षिकः
समुपारूढानां त्रैवर्षिकः। स्थलस्य द्वैवर्षिकः। स्वात्माधाने विक्रये च।
अर्थशास्त्र, 3/65/9, पृ० सं० - 292.

36 गवादिदुग्धान्नफलं कुटुम्बार्थाद्धरेन्नृपः।
उपभोगे धान्यवस्त्रं क्रेतृतो नाहरेत् फलम्।। शुक्रनीति, 4/2/127.
पक्वं पक्वमिवारामात् फलं राज्यादवाप्नुयात्।

37 आत्मच्छेदभयादामं वर्जयेत् कोपकारकम्।। अर्थशास्त्र, 5/90/2, पृ० सं० - 419.

38 6...नवीनकरशुल्काद्यैर्लोक उद्विजते ततः।। शुक्रनीति, 2/273.